© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 2 | Print ISSN : 2395-6011 | Online ISSN : 2395-602X

काव्यमीमांसा के आलोक में कवि विमर्श

डॉ. रूबी साहू
प्रवक्ता संस्कृत
एस.एफ.एस. आर्य कन्या महाविद्यालय,
झाँसी, उत्तर प्रदेश

साहित्यशास्त्र किंवा काव्यशास्त्र का उद्‌भव और विकास कब और कैसे हुआ, इस गूढ़ प्रश्न पर अनेक विद्वानों ने अपने–अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। भारतीय काव्यशास्त्र की यह सुदीर्घ परम्परा प्राचीनकाल से ही परिवर्द्धित तथा परिमार्जित होती हुई चली आ रही है। इसी क्रम में आचार्य राजशेखर ने अपनी प्रखर तथा पौराणिक काव्यशैली और शास्त्रीय तर्कों के द्वारा काव्यपुरूष तथा साहित्यविद्यावधु के आख्यान को प्रस्तुत करते हुए तत्कालीन समाज में व्याप्त काव्य किंवा साहित्य सम्बन्धी भ्रान्तियों का निराकरण करते हुए साहित्य को पाँचवीं विद्या के रूप में प्रतिष्ठित किया। आचार्य ने देश–देशान्तरों का भ्रमण करते हुए वहाँ की सामाजिक, सांस्कृतिक भौगोलिक तथा ऐतिहासिक परिस्थितियों का अवलोकन कर उसे अपनी कृति के माध्यम से साहित्य समाज के समक्ष प्रस्तुत किया।

यद्यपि आचार्य राजशेखर की कृति काव्यमीमांसा साहित्यशास्त्र से संबंधित है तथापि उसमें सम्पूर्ण भारतवर्ष से संबंधित विभिन्न तथ्यों तथा निर्देशों का उल्लेख प्राप्त होता है जिसे हम आचार्य राजशेखर के एक सफल आचार्य होने का प्रमाण कह सकते हैं। काव्यमीमांसा अट्ठारह अधिकरणों में विभक्त काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ है। सम्प्रति इसका केवल प्रथम अधिकरण ही प्राप्त होता है जिसमें कवि तथा काव्य से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों का सोदाहरण विवेचन किया गया है। इस शोध–आलेख का विषय काव्यमीमांसा के प्रथम अधिकरण के विभिन्न अध्यायों में विभिन्न आधारों को लेकर किए गए कवि के भेदों से संबंधित है, अतः यहाँ इसी दृष्टि से विचार करना उचित समझा गया है।

काव्यशास्त्र में शक्ति, व्युत्पत्ति तथा अभ्यास को काव्यहेतु के रूप में स्वीकार किया गया है।[1] यह बात और है कि कुछ आचार्य इन तीनों में से एक को, कुछ दो को और कुछ तीनों के समुदित रूप के काव्यहेतु के रूप में स्वीकार करते हैं। आचार्य राजशेखर ने शक्ति को काव्य का हेतु स्वीकार करते हुए उसे प्रतिभा तथा व्युत्पत्ति से भिन्न माना है।[2] उनका मत है कि शक्ति ही प्रतिभा तथा व्युत्पत्ति की जननी है। प्रतिभा भी कारयित्री तथा भावयित्री के भेद से दो प्रकार की होती है।[3] कारयित्री कवि तथा भावयित्री भावक अर्थात् आलोचक की उपकारिणी मानी गई है। कारयित्री भी पुनः सहजा, आहार्या तथा औपदेशिकी के भेद से तीन

प्रकार की मानी गई है जिसके आधार पर कवि के भी सारस्वत, आभ्यासिक और औपदेशिक तीन भेद किए गए हैं।[4] सहजा प्रतिभा से युक्त कवि सारस्वत कवि होता है, जिसकी सरस्वती जन्मान्तर से ही प्रस्फुटित होती है और वह इस लोक के किंचित संस्कार मात्र से काव्यकर्म में प्रवृत्त होता है। आहार्या प्रतिभा से युक्त कवि आभ्यासिक कहलाता है जिसकी भारती इस जन्म के संस्कार से प्रयत्नपूर्वक प्रस्फुटित होती है। औपदेशिकी प्रतिभा से युक्त कवि औपदेशिक कहलाता है जिसके लिए उसे तंत्र–मंत्र की आवश्यकता होती है। इन कवियों के विषय में कहा जाता है कि सारस्वत स्वतन्त्र तथा आभ्यासिक सीमित होता है किन्तु औपदेशिक कवि सुन्दर और सारहीन रचना करता है।

सारस्वतः स्वतन्त्रः स्याद्भवेदाभ्यासिको मितः।

औपदेशकविस्त्वत्र वल्गु फल्गु च जल्पति।।''

भावयित्री प्रतिभा भावक अर्थात् आलोचक की उपकारिणी मानी गई है और इसी आधार पर आलोचक की आरोचकी, सतृणाभ्यवहारी, मत्सरी तथा तत्त्वाभिनिवेशी प्रभृति चार कोटियाँ निर्धारित की गई हैं।[5] आरोचकी आलोचक की आरोचकिता नैसर्गिक तथा ज्ञानयोनि के भेद से दो प्रकार की होती है। ज्ञानजन्य आरोचकिता अर्थपूर्ण काव्य पर रीझती है किन्तु नैसर्गिक आरोचकिता सैकड़ों संस्कारों से भी परिवर्तित नहीं होती। सतृणाभ्यवहारी आलोचक सामान्य बुद्धि से युक्त होता है जो बहुत सी अनपेक्षित बातों का ग्रहण कर अपेक्षित बातों को छोड़ देता है। मत्सरी आलोचक ईर्ष्यावश परगुणों के वर्णन में प्रवृत्त न होने के कारण दृष्ट पदार्थो को भी नहीं देखता। तत्वाभिनिवेशी आलोचक बहुत ही कम हुआ करते हैं क्योंकि ऐसे आलोचक गुणग्रहण करते हुए नीरक्षीर विवेक के अनुसार आलोचना करते हैं।

पाँचवे अध्याय व्युत्पत्तिविपाक में उचित तथा अनुचित के विवेक को काव्यहेतु व्युत्पत्ति[6] स्वीकार करते हुए प्रतिभा तथा व्युत्पत्ति से युक्त कवि के शास्त्रकवि, काव्यकवि तथा उभयकवि प्रभृति तीन भेद किए गए हैं।[7] शास्त्रकवि के भी तीन भेद किए गए हैं। प्रथम वह जो शास्त्र का निर्माण करे, द्वितीय वह जो शास्त्र में काव्य को निविष्ट करे तथा तृतीय वह जो काव्य में शास्त्र का सन्निवेश करे।[8] काव्यकवि भी रचनाकवि, शब्दकवि, अर्थकवि, अलंकारकवि, उक्तिकवि, रसकवि, मार्गकवि तथा शास्त्रार्थकवि के भेद से आठ प्रकार के होते हैं।[9] रचनाकवि शब्दप्रयोग में तो दक्ष होता है किन्तु अर्थगाम्भीर्य में उतना निपुण नहीं होता। 'लोलल्लाङ्गूलवल्लीवलयितबकुलानोकहस्कन्धगोलै.....इत्यादि पद्य को रचनाकवि के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है। शब्दकवि को तीन प्रकार का माना गया है। प्रथम नामकवि सुबन्त पदों का तथा द्वितीय आख्यान कवि क्रियापदों का अधिक प्रयोग करता है। तृतीय उभयकवि प्रायः दोनों का समानरूपेण प्रयोग करता है। जो कवि शब्द की अपेक्षा अर्थ की ओर विशेष ध्यान देकर चमत्कारपूर्ण अर्थरचना करता है, वह अर्थकवि कहलाता है। 'देवीपुत्रमसूत नृत्यत गणाः किं तिष्ठतेत्युद्भवे.....इत्यादि पद्य अर्थकवि का उदाहरण है।

अलंकारकवि शब्द तथा अर्थ के भेद से दो प्रकार का होता है। ''न प्राप्तं विषमरणं प्राप्तं पापेन कर्मणा विषमरमणं च.....'' इत्यादि पद्य को शब्दालंकर के उदाहरण के रूप में उदाहृत किया गया है। इसमें विषम–रण तथा विष–मरण एवं भागीरथ्यां तथा मन्दभागीरथ्याम् में शब्दालंकार का यमक नामक भेद है। ''भ्रान्तजिह्वापत्राकस्य फणच्छत्रस्य बासुकेः इत्यादि अर्थालकार का उदाहरण है जिसमें भ्रान्तजिह्वापताक, फणच्छत्रस्य वासुकेः.....' इत्यादि अर्थालंकार का उदाहरण है। जिसमें भ्रान्तजिह्वापताका फणच्छत्र तथा दंष्ट्राशलाका में रूपक अलंकार है। जो कवि किसी विचार को समाधि नामक गुण के माध्यम से सुन्दर रीति में प्रस्तुत करता है, उक्ति कवि कहलाता है। 'उदरमिदमनिन्द्यं मानिनीश्वासलाव्यं.....तथा प्रतीच्छत्याशोकीं किसलयपरावृत्तिमधरः.....इत्यादि उक्तिकवि के उदाहरणों में किसी रमणी के सौन्दर्य को सुन्दर उक्तियों के द्वारा और अधिक सुन्दर बना दिया गया है। रसकवि वह होता है जो उचित शब्दों द्वारा काव्य में रस की ऐसी धारा प्रवाहित कर दे जिससे सहृदय आह्लादित हो उठता है। कालिदासकृत ''एतां विलोकय तनूदरि ताम्रपर्णीमम्भोनिधौ विवृतशुक्तिपुटोद्धृतानि पद्य को रसकवि के उदाहरण के रूप में उदाहृत किया गया है जिसमें कवि श्रृंगाररस का वर्णन करने में सफल रहा है। रीति को ही साहित्यशास्त्र में मार्ग कहा गया है, अतः रीति के प्रयोग में दक्ष कवि मार्गकवि कहा जाता है। 'मूलं बालकवीरूधां सुरभयो जातीतरूणां त्वचः.....इत्यादि पद्य मार्गकवि के उदाहरण के रूप में उदाहत है। जो कवि साहित्य के अतिरिक्त न्याय, योग, आदि अन्य शास्त्रों का ज्ञान रखते हुए आवश्यक स्थलों पर इनका प्रयोग करता है, वह शास्त्रार्थ कवि कहलाता है। अपने वेणीसंहार नाटक में भीमसेन की आत्मारामा विहितरतयो निर्विकल्पे समाधौ.....'' इत्यादि उक्ति शास्त्रार्थकवि के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत है जिसमें आत्मारामा, निर्विकल्पक समाधि इत्यादि योगदर्शन के शब्दों के प्रयोग से और अधिक चमत्कार उत्पन्न हो गया है।

आचार्य राजशेखर ने कवियों की काव्यविद्यास्नातक, हृदयकवि, अन्यापदेशी, सेविता, घटमान, महाकवि, कविराज, आवेशिक, अविच्छेदी, संक्रामयिता प्रभृति दश अवस्थाएँ कही है[10] जिनमें से सारस्वत तथा आभ्यासिक की सात और औपदेशिक की तीन बताई गई हैं। कवित्व की इच्छा करने वाला जो कवि गुरूकुल में रहकर काव्य की विद्याओं एवं उपविद्याओं को प्राप्त करता है, वह विद्यास्नातक है। हृदय में ही कविता कर उसे छिपाने वाला हृदयकवि तथा दोष–भय के कारण स्वयं के काव्य को दूसरे का कहकर पढ़ने वाला अन्यापदेशी होता है। प्राचीन कवियों से छाया ग्रहण कर काव्य रचना करने वाला सेविता तथा अच्छी कविता करने पर भी उसे प्रबन्धरूप से निबद्ध न करने वाला घटमान कहा जाता है। किसी भी प्रकार के श्रेष्ठ प्रबन्ध की रचना करने वाला महाकवि तथा विभिन्न भाषाओं, विभिन्न प्रबन्धों तथा विभिन्न रसों के निर्माण में समर्थ कवि कविराज कहलाता है। मंत्रादि के उपदेश से आवेश के समय ही काव्यरचना करने वाला आवेशिक इच्छानुसार

निरवच्छिन्न कविता करने वाला अविच्छेदी तथा मंत्र–सिद्धि के द्वारा कन्याओं एवं कुमारों में सरस्वती का संचार करने वाला संक्रामयिता कहा जाता है।

दशम अध्याय कविचर्या में कवि की दिनचर्या के अनुसार कवियों के चार भेद असूर्यम्पश्य, निषण्ण, दत्तावसर और प्रयोजनिक किए गए हैं। यहाँ कवियों को दिन तथा रात का प्रहर के क्रम से विभाजन कर सन्ध्या, भोजन, काव्याभ्यास, काव्यनिर्माण आदि सभी कार्यों के लिए उपयुक्त समय का निर्देश किया गया है।[11] असूर्यम्पश्य कवि गुफा या गर्भ भूमि में निश्चल वृत्ति वाला होकर काव्य करता है तथा उसके लिए सभी समय काव्यनिर्मिति के लिए उपयुक्त होते हैं। जो नियमित रूप से नहीं अपितु प्रबल इच्छा या काव्यशक्ति का आवेश होने पर कविता करे, वह निषण्ण कवि कहलाता है जिसके लिए सभी समय काव्यनिर्माण के लिए उपयुक्त होते हैं। सेवादि कार्यो को भी करता हुआ काव्यनिर्माण में प्रवृत्त होने वाला कवि दत्तावसर कहलाता है जिसके लिए काव्यनिर्माण के कुछ ही समय होते हैं। रात्रि के चौथे प्रहर का अर्धभाग, भोजन के उपरान्त, व्यायाम अथवा श्रम की निवृत्ति के पश्चात्, शिविका आदि की यात्रा इत्यादि दत्तावसर कवि के लिए काव्यनिर्माण के उपयुक्त समय हैं। जो किसी प्रासंगिक विषय को उद्दिष्ट कर काव्यरचना करे उसे प्रायोजनिक कहते हैं, जो प्रयोजन उपस्थित होने पर किसी भी समय काव्यरचना में प्रवृत्त हुआ करता है।

ग्यारहवें अध्याय शब्दार्थहरणोपाय में हरण के दो प्रकार परित्याज्य तथा अनुग्राह्य निर्दिष्ट हैं। वस्तुतः किसी दूसरे द्वारा प्रयोग किए गए शब्द तथा अर्थ का अपने काव्य में प्रयोग करना ही हरण है। यहाँ शब्दहरण पद, पाद, अर्थ, वृत्त तथा प्रबन्ध की दृष्टि से पांच प्रकार का कहा गया है तथा शब्दहरण के अनुसार कवि के चार भेद उत्पादक, परिवर्तनकारी, आच्छादक और संवर्गक माने गए है।[12]

वारहवें अध्याय अर्थहरण में अर्थभेद के अनुसार कवियों के चार भेद निर्दिष्ट हैं। अन्ययोनि, निह्नुतयोनि तथा अयोनि के भेद से अर्थ मुख्यतः तीन प्रकार का होता है। अन्योनि प्रतिबिम्बकल्प तथा आलेख्यप्रख्य के भेद से दो प्रकार का तथा निह्नुतयोनि तुल्यदेहितुल्य तथा परपुरप्रवेशसदृश के भेद से दो प्रकार का होता है। अन्योयोनि तथा निह्नुतयोनि के कुल चार भेदों के अनुसार कवि भी भ्रामक, चुम्बक, कर्षक और द्रावक प्रभृति चार प्रकार के होते हैं। ये चारों ही कवि लौकिक होते हैं और पाँचवा अदृष्ट विषयों का दर्शक होने के कारण अलौकिक होता है जिसे चिन्तामणि कहा जाता है। किसी प्राचीन वस्तु को भी दूसरे द्वारा न कही गयी बताकर अप्रसिद्ध आदि कारणों से लोगों को भ्रम में डालने वाला कवि भ्रामक कहा गया है। दूसरे के अर्थ को अंगीकार कर अपने मनोहर वाक्यों से किंचित नवीनता का पुट डालने वाला कवि चुम्बक कहा गया है। उल्लेखवश किसी दूसरे से वाक्यार्थ लेकर काव्यरचना करने वाला कवि कर्षक कहा जाता है। द्रावक कवि दूसरे के मूल वाक्य को स्वर्णादि के समान पिघलाकर उसमें नवीनता का संचार करते हुए उसे अपने काव्य में मिला लेता है जिसका ज्ञान दूसरों को नहीं हो पाता। चिन्तामणि कवि अलौकिक तथा अद्वितीय होता है जो सोचने मात्र से

ही रसपूर्ण और विचित्र अर्थ वाली कविता करता है जो प्राचीन कवियों के द्वारा नहीं देखी गई होती। प्रतिबिम्बकल्प, आलेख्यप्रख्य, तुल्यदेहितुल्य तथा परपुरप्रवेशसदृश, के आठ–आठ उपभेद होने पर कुल बत्तीस भेदोपभेद हो जाते हैं जिसके अनुसार कवि के भी अन्य बत्तीस भेद हो जाते हैं। आचार्य राजशेखर का मत है कि पुरूषों के समान स्त्रियाँ भी कवि हो सकती हैं क्योंकि आत्मा में तो संस्कार दोनों के ही समान होते हैं। यद्यपि काव्यमीमांसा में कवियों के शताधिक भेद बताए गए हैं तथापि शोध आलेख की मर्यादा में रहते हुए यहाँ मुख्य भेदों का ही विवेचन किया गया है तथा अन्य भेदों का उल्लेख मात्र कर दिया गया है।

आचार्य राजशेखर द्वारा किए गए कवियों के भेदोपभेदों पर जब हम सूक्ष्मता से विचार करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने भेदवर्णन में मुख्यरूप से काव्यहेतु को आधार बनाया है। यद्यपि उन्होंने शक्ति को ही मुख्यतया काव्यहेतु माना तथापि प्रतिभा तथा व्युत्पत्ति का जनक शक्ति को मानकर वे प्रतिभा तथा व्युत्पत्ति को भी काव्यहेतु स्वीकार कर लेते हैं। सर्वप्रथम वे बुद्धि के अनुसार कविभेद का वर्णन करते हैं जिसे हम शक्ति के रूप में ग्रहण कर सकते हैं क्योंकि आचार्य यहाँ जन्मान्तर संस्कार का भी उल्लेख कर देते हैं। शक्ति को जन्मान्तर संस्कर अन्य आचार्यों ने भी माना है। बुद्धि के पश्चात् प्रतिभा तथा व्युत्पत्ति के अनुसार कविभेद किया गया है, जो स्पष्ट ही है क्योंकि प्रतिभा तथा व्युत्पत्ति को अनेक आचार्यों ने काव्यहेतु स्वीकार किया है। कविचर्या के अनुसार किए गए भेदों में अभ्यास का संकेत मिलता है क्योंकि यहाँ कवि की दिनचर्या का वर्णन है और कवि सभी कार्यो के लिए समय का उचित विभाजन करने पर ही काव्याभ्यास के लिए समय प्राप्त कर सकता है। शब्दहरण तथा अर्थहरण के आधार पर किए गए कविभेद में भी अभ्यास का संकेत है क्योंकि प्राचीन कवियों के काव्यों का पौनः पुण्येन अभ्यास किए बिना वह शब्द तथा अर्थ का हरण करने में समर्थ नहीं हो सकता।

सन्दर्भ

1. 'शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्रकाव्याद्यवेक्षणात्।
   काव्यज्ञशिक्षयाऽभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे।।' काव्यप्रकाश, प्रथम उल्लास
2. 'सा केवलं काव्ये हेतुः' इति यायावरीयः। विप्रसृतिश्च सा
   प्रतिभाव्युत्पत्तिभ्याम्। काव्यमीमांसा, चतुर्थ अध्याय
3. सा च द्विधा कारयित्री भावयित्री च। काव्यमीमांसा च.अ.
4. त इमे त्रयोऽपि कवयः सारस्वतः, आभ्यासिकः, औपदेशिकश्च।
   काव्यमीमांसा, च.अ.
5. 'ते च द्विधाऽरोचकिनः, सतृणाभ्यवहारिणश्च' इति मंगलः।
   'चतुर्धा' इति यायावरीयः 'मत्सरिणस्तत्त्वाभिनिवेशिनश्च।' काव्यमीमांसा,च.अ.

6. 'उचितानुचितविवेको व्युत्पत्तिः इति यायावरीयः।' काव्यमीमांसा प.अ.
7. प्रतिभाव्युत्पत्तिमांश्च कविः कविरित्युच्यते/स च त्रिधा।
   शास्त्रकविः काव्यकविरुभयकविश्च। काव्यमीमांसा पं.अ.
8. तत्र त्रिधा शास्त्रकविः। यः शास्त्रं विधत्ते, यश्च शास्त्रे काव्यं संविधत्ते,योऽपि काव्ये शास्त्रार्थ निधत्ते। काव्यमीमांसा पं. अ.
9. काव्यकविः पुनरष्टधा। तद्यधा–रचनाकविः, शब्दकविः, अर्थकविः अलंकारकविः उक्तिकविः मार्गकविः शास्त्रर्थकविरिति। काव्यमीमांसा, पं. अ.
10. दश च कवेरवस्था भवन्ति....। तद्यथा काव्यविद्यास्नातको, हृदयकविः, अन्यापदेशी, सेविता, घटमानः महाकविः कविराज', आवेशिकः, अविच्छेदी संक्रामयिता च काव्यमीमांसा, पं. अ.
11. अनियतकालः प्रवृत्तयो विप्लवन्ते तस्माद्दिवसं निशां च यामक्रमेण चतुर्द्धा विभजेत ।। दशम अ.
12. उत्पादकः कविः कश्चित्कश्चिच्च परिवर्तकः।
    आच्छादकस्तथा चान्यस्तथा संवर्गकोऽपरः।। काव्यमीमांसा एकादश अ.
13. भ्रामकश्चुम्बकः किंच कर्षको द्रावकश्च यः।
    स कविर्लौकिकोऽन्यस्तु चिन्तामणिरलौकिकः।। काव्यमीमांसा, द्वादश अ.